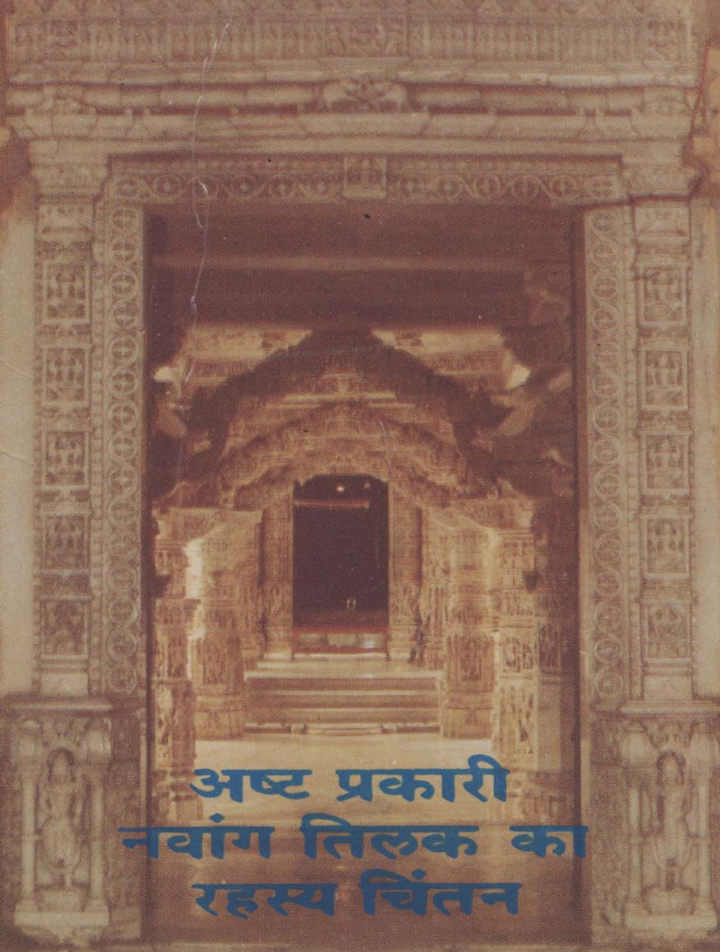

अष्ट प्रकारी नवांग तिलक का रहस्य चिंतन

आचार्य श्री विजय भुवनभानुसूरीश्वरजी महाराज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवाधिदेव

अचिन्त्य महिमाशील

अरिहंत परमात्मा की अष्टप्रकारी
पूजा–नवांग तिलक का रहस्य–चिन्तन

लेखक
न्याय विशारद् वर्धमान तपोनिधि
परमपूज्य आचार्य
श्री विजय भुवनभानुसूरीश्वरजी म.सा.

प्रकाशक
दिव्य दर्शन ट्रस्ट
३९, कलिकुंड सोसायटी
धोलका, जि. अमदावाद
Pin.- 387810

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेखक

सिद्धांत महोदधि परमपूज्य
आचार्य श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी महाराज
साहब के शिष्य रत्न न्याय विशारद् वर्धमान
तपोनिधि परम पूज्य
आचार्य श्री विजय भुवनभानु सूरीश्वरजी महाराज

सौजन्य

श्री शांतिलाल जी शेठिया.
सौ.सुशीलाबेन, शशीबेन, सुनीताबेन संजयकुमार
मद्रास

मुल्य : पांच रुपये

प्राप्तिस्थान

दिव्य दर्शन ट्रस्ट

कुमारपाल वि.शाह	भरतकुमार चतुरभाई शाह
३९, कलिकुंड सोसायटी	८६८ कालुशीनी पोल
धोलका ३८७८१०	कालुपुर
जि.अमदावाद	अमदावाद. ३८० ००१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अष्टप्रकारी पूजा का अद्भुत रहस्य

भाव–शून्य क्रिया रस निकाले हुए गन्ने जैसी है। भावयुक्त थोडी–सी भी क्रिया रस से भरी गंडेरी जैसी है। तीर्थंकर भगवान की पूजा की क्रिया में, साथ में हृदय के भाव न मिलाये जायें, तो उसका क्या महत्व रहेगा ? कितना फल मिलेगा ? प्रतिदिन भगवान की पूजा करते रहें, परंतु भावोल्लास न हो, तो मामुली फल मिलता है। कई दिनों की मेहनत नगण्य फल दे जाती है। यह कैसा करुण चित्र है ?

खूबी तो यह है कि, यह पूजन–क्रिया ऐसे सुन्दर भावों को हृदय में उछालने हेतु जबरदस्त साधन है, जो भाव लाने का सामर्थ्य सांसारिक क्रिया में नहीं। दूसरी दानादि क्रियाओं में भी ऐसा सामर्थ्य नहीं। जिनपूजन की खास क्रिया में, तथा प्रकार के भाव पैदा करने की ताकत है। पूजा के आलंबन से ही ऐसे भाव उछल सकते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूजा करने पर यह आलंबन तो हाथ में आया, फिर भी इस आलंबन के द्वारा भी भाव से दिल को न रंगा जाय, यह कैसी दुर्दशा।

भगवान की पूजा अर्थात् भगवान के चरणों में अपने कीमती द्रव्यों का समर्पण। सबसे पहले तो यह सोचना है कि जिस प्रकार समुद्र में पडी हुई पानी की एक बूंद भी अक्षय बनती है, उसी प्रकार जिनेश्वर भगवान के चरणों में अर्पित की हुई थोडी भी लक्ष्मी अक्षयलक्ष्मी बनती है।

कुमारपाल महाराजा ने पहले अति गरीब परिस्थिति में भी प्रभु को सिर्फ पांच कौडी के फूल खरीदकर चढाये, तो वह अक्षयलक्ष्मी इस तरह से बनी कि उसके बाद के कुमारपाल के भव में १८ देश का राज्य मिला। वह राज्य भी नरक में डुबाने वाला नहिं, लेकिन परस्त्री त्याग, चातुर्मास में पूर्ण ब्रह्मचर्य, परम गृहस्थधर्म, जैनधर्म पर अलौकिक श्रद्धा, प्रबल अर्हद्‌भक्ति और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुमान, बारह व्रत आदि कितना अक्षयधन पाया। इतना ही नहिं, परन्तु अपने १८ देश के राज्य में उन्होंने सात व्यसनों को देश निकाला दिला दिया, और जीवदया सर्वत्र फैला दी। यह सब सच्ची आत्मलक्ष्मी है। इसीसे तो गणधर पद का पुण्य पैदा हुआ। वे देवलोक में गये हैं, अगली(आगामी) चौबीसी में प्रथम तीर्थंकर भगवान के गणधर होकर मोक्ष जायेंगे। पांच कौडी जितनी मामुली–सी लक्ष्मी प्रभु के चरणों में अर्पित की तो वह उत्तरोत्तर मोक्ष तक बढती ही चली और अक्षयलक्ष्मी ही बनी न ! बस, स्वद्रव्य से भगवान की पूजा करते हुए यही भावना होनी चाहिये कि, "मेरे अहोभाग्य कहां कि मेरी लक्ष्मी त्रिलोक नाथ के चरणों में जाय। ओर ऐसी उत्तरोत्तर बढती हुई आत्मलक्ष्मी दिलाते हुए अन्त में मुझे अक्षय मोक्ष लक्ष्मी दिला दे। 'द्रव्यपूजा के साथ ऐसी भावना हो, तभी ऐसे सुंदर भाव उछलेंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब द्रव्यपूजा के आठ प्रकारों में से प्रत्येक प्रकार में कैसी भावना करने से उसमें उत्तम भाव मिलेगा, इस पर विचार करेंगे।

अष्टप्रकारी पूजा से पहले प्रातः वासक्षेप पूजा करना ; वह नवांगीं पूजा नहि है, किन्तु प्रभु के ऊपर और आजुबाजु वास यानी सुगन्धवासीत चन्दनपूर्ण का क्षेप करना अर्थात् चूर्ण डालने या बरसाने की पूजा है। वासक्षेप पूजा करते वक्त मन में यह भाव रखना है कि 'प्रभु ! आपके प्रभाव से इस वास की तरह मेरी आत्मा में सुवासना बरसे।

'कुवासना' अर्थात् आहारादि संज्ञा के रुप–रस आदि विषयों के, परिग्रह–आरंभ–समारंभ के, निद्रा–आराम के, क्रोध–स्वमति–अहंत्वादि कषायों के, ओघ (गतानुगति) के तथा लोकेषणा के कुसंस्कार। इन सब कुवासनाओं को मिटाये ऐसी शुद्ध सुवासनायें मुझे मिले, ऐसी भावना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रखनी है।

कुवासनायें सुवासना से नष्ट की जा सकती है। आहार संज्ञा की कुवासना के सामने–तप के मानसिक झुकाव की सुवासना (सुसंस्कार) रुप–रसादि विषयों के सामने–उन पर अंकुश, नियंत्रण और उसके त्याग के झुकाव की सुवासना, परिग्रह की कुवासना के सामने दान, परिमाण, निर्लोभता और निःस्पृहता के मानसिक मोड की सुवासना ; आरंभ– समारंभ की वासना के सामने जीवदया के व आवश्यकता पर निग्रह के मानसिक मोड के सुसंस्कार, क्रोधादि कषायों के सामने क्षमादि की सुवासना, गतानुगतिकता के सामने तात्विक समझ की, लोकेषणा के सामने जिनाज्ञाबन्धन के मानसिक मोड के सुसंस्कार इस प्रकार कुवासनाओं को मिटाया जा सकता है। यह सब प्रभु की पूजा के वक्त मन में नहिं लाना, परंतु अवकाश के समय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह सब मन में निश्चित करके रखना चाहिये ।

पूजा के वक्त तो सिर्फ इतनी भावना रखनी कि ' प्रभु ! मुझे सुवासनायें मिलें । उसमें भी जो दोष स्वयं में अधिक हो, उसके सामने की सुवासना वासक्षेप करते हुए मांगने की भावना की जा सकती है ।

प्रभु की अष्टप्रकारी पूजा शुरु करने से पहले प्रभु के पास से जीव–जन्तु उड जाय, इसके लिए एक मोरपींछी प्रभु पर फिराना और दूसरी अलग मोरपींछी पबासण पर फिराना, बाद में प्रभु के अंग पर से निर्माल्य उतारते हुए ऐसी भावना रखना कि 'प्रभु ! मेरी आत्मा पर से जड़पुद्गल की रागदशा के निर्माल्य उतर जायें । प्रतिदिन ऐसी भावना रखने से इसके संस्कार पडते जाते हैं ।, बढते जाते हैं ।, इसका असर जीवन पर पडेगा और जड़ का राग कम होता चला जाएगा ।

अष्टप्रकारी पूजा में पहली अभिषेक पूजा है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) अभिषेक पूजा

जल पूजा जुगते करो, मेल अनादि विनाश ।
जल पूजा फल मुज हजो, मांगो एम प्रभु पास ॥
ज्ञान कलश भरी आतमा, समता रस भरपूर ।
श्री जिन ने नवरावतां, कर्म थाये चकचूर ॥

जब किसी को राजा बनाना हो, तब अमात्य और सामंत राजा उसके मस्तक पर अभिषेक करते हैं । और घोषणा करते हैं कि, आज से आप राज्य के, हमारे और प्रजा के राजा हैं । उसी प्रकार यहां पर प्रभु के मस्तक पर अभिषेक करते हुए हमारे हृदय – सिंहासन पर हम प्रभु को राजा के रुप में प्रतिष्ठित करते हैं । प्रभु के जन्म के वक्त मेरु शिखर पर ६४ इन्द्र और करोडों देव प्रभु के मस्तक पर अभिषेक करते हैं । अभिषेक पूजा करते वक्त यह भावना रखनी है कि, 'प्रभु !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आज तक मेरे हृदय सिंहासन पर मोह-राजा राजा के रुप में स्थापित था; और उसकी आज्ञा मुझ पर चलाती थी । 'प्रभु ! अब मोहराजा पदभ्रष्ट हुआ । आप मेरे हृदय-सिंहासन पर प्रतिष्ठित हो जाईये और आपकी आज्ञा मेरे जीवन पर चले ।

प्रतिदिन ऐसी भावना रखते हुए अभिषेक पूजा करने से आत्मा में ऐसे संस्कार पैदा होंगे कि, 'अब मेरे जीवन पर मोह की हकूमत' नही चलेगी, मैं उसकी आज्ञा से बंधा हुआ नही हूं । मेरे सर पर है - एक जिन की आज्ञा । यह संस्कार दढ होने से सम्यग्दर्शन प्राप्त होता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) चन्दन पूजा

शीतल गुण जेहमां रह्यो, शीतल प्रभु मुख रंग।
आत्म शीतल करवा भणी, पूजो अरिहा–अंग।

अब दूसरी चन्दनपूजा में प्रभु को चन्दन से विलेपन करना है। यह करते वक्त मन में यह भावना रखनी है कि 'प्रभु ! चंदन जलने पर भी सुगंध देता है, घिसने पर भी शीतलता देता है। इस चन्दनपूजा से मैं मांगता हूं कि, 'प्रभु ! मैं प्रलोभनों की आग में भी शील और संयम की सुगन्ध से महकुँ, और प्रतिकूलता या अनिष्ट से घिसने पर भी सौम्यता रूपी शीतलता रखुं। रोज ऐसी भावना करते–करते प्रलोभनों के सामने शील–संयम की अभिलाषा और प्रतिकूल जनों के प्रति सौम्यता सतेज बनती जाती है। ऐसे करते–करते इस सुगंध–सुवास के आदर के संस्कार पडते जाते हैं। उसके आदर के संस्कार बढने के बाद उसका विशेष प्रयत्न होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस पूजा के बाद की जाने वाली केशर पूजा में प्रभु के नौ अंगो पर तिलक किया जाता है, जो नवांगी तिलक कहलाता है। एक-एक अंग का रहस्य भावित करने से परमानन्द का स्वाद आयेगा।

उसके बाद वर्क-बादला आदि से प्रभु की अंगरचना करते है, वह वस्त्र-सत्कार पूजा कहलाती है। उसमें यह चिन्तन करना है कि 'हे प्रभु! जिस प्रकार इस अंगरचना से आपका देह शोभित होता है, उसी तरह सम्यग्दर्शन और ज्ञानद्रष्टि से मेरी आत्मा सुशोभित बने। मेरे नाथ! आपकी ही कृपा से मेरे द्वारा प्राप्त की गयी लक्ष्मी मेरे स्वयं के व कुटुंब के उपभोग के नाले में बही जा रही है, उसमें से सिर्फ आपकी अंगरचना में खर्च की गयी लक्ष्मी ही कृतार्थ हुई। मुझे कृतज्ञता दीजिये।'

आभरण-पूजा में भी प्रभु के अंग को शोभित करके अपनी आत्मा में सम्यग्दर्शन, और ज्ञानद्रष्टि की सुशोभितता मांगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) पुष्प पूजा

सुरभि अखंड कुसुम ग्रही, पूजो गत संताप ।
सुम जंतु भव्य ज परे, करीये समकित छाप ॥

तीसरी पुष्प पूजा में यह चिन्तन करना है कि, ' प्रभु ! पुष्प सुमनस् कहलाता है तो आपको सुमनस् चढाते हुए (अर्पण करते हुए) मुझे भी आप सुमनस् अर्थात् अच्छा, प्रशान्त-प्रसन्न, परार्थ रसिक मन दीजिये । प्रशान्तता से काम, क्रोध, लोभादि कषायों से होने वाली अशान्ति और गरमी मिटे । प्रसन्नता से दुर्ध्यान और असंतोष की पीडा जाएगी और परार्थ रसिकता से स्वार्थान्धता मिटेगी ।' पुष्प पूजा में ऐसा चिन्तन भी किया जा सकता है कि, हे प्रभु ! पुष्प के कोने-कोने में सुवास और सौन्दर्य भरा है, इसी तरह पुष्प पूजा से मेरी आत्मा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के कोने–कोने में सद्गुणों की सुवास और सुकृतों का सौन्दर्य मिले । प्रतिदिन प्रभु को पुष्प चढाते हुए यह भावना रखने से, इसके संस्कार आत्मा में जमा होने से, सद्गुणों और सुकृतों का पक्षपात(आदर) बढता है, दुर्गुणो (दुष्कृत्यों) के प्रति नफरत बढती है । इसीसे पहले में प्रवृति और दूसरे की निवृत्ति का प्रयत्न सुलभ होता है ।

(४) धूप पूजा

ध्यान घटा प्रगटावीये, वाम नयन जिन धूप ।
मिच्छत दुर्गन्ध दूर टले, प्रगटे आत्म स्वरूप ॥

चौथी धूप पूजा में यह चिन्तन करना है कि, 'प्रभु ! जैसे धूप का धूंआ ऊपर की ओर ही जाता है, उसी प्रकार हमारे दिल के भाव भी ऊंचे ही जायें : अर्थात शुभ जिनभक्ति जीवदया, क्षमादि में ही जाये, परंतु नीचे क्रोधादि तथा विलास और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आरंभ – समारंभ में न जायें।' अथवा ऐसे चिन्तन करना कि, 'प्रभु ! जिस प्रकार इस धूप से मन्दिर के अन्दर दुर्गन्ध भर गयी हो, तो वह दूर हो। उसी तरह मेरी आत्मा में से मिथ्यात्वरूपी दुर्गन्ध दूर हो और सम्यक्त्व की सुवास फैले।' प्रतिदिन दिल में ऐसी भावना रखने से इसके संस्कार बढने से हृदय के भावों को नीचे(हल्के) कषायादि में ले जाते हुए जीव हिचकिचायेगा और ऊंचे जिनभक्ति, दया, क्षमादि में अपने भाव ले जाएगा।

(५) दीपक पूजा

द्रव्य दीप सुविवेक थी, करतां दुःख होय फोक।
भाव प्रदीप प्रगट हुए, भासित लोकालोक ॥

पाँचवी दीपक पूजा में ऐसी भावना करनी है कि, 'प्रभु ! जिस प्रकार यह दीपक घी और वाट में से जन्मा होने पर भी इन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोनों से एकदम विलक्षण, जगमगाता हुआ, प्रकाशमय और दूसरे को प्रकाशदाता का स्वरूप धारण करता है । उसी प्रकार मैं भी मोहमूढ जगत के संयोग में से पैदा हुआ होने पर भी इस दीपक पूजा से जगत से विलक्षण ऐसा शुद्ध ज्ञानादि प्रकाशमय बनुँ और दूसरे को उस प्रकाश का दाता बनुं । अथवा ऐसा चिन्तन भी किया जा सकता है कि, हे प्रभु ! यह द्रव्य-दीपक आपके भावदीपक केवलज्ञान का स्मरण कराता है, लोक में मंगल रूप माना जाता है । इसीलीये लोक दीपक से दिवाली मनाता है । इस पूजा से मुझे सम्यग्ज्ञान से लेकर केवलज्ञान तक सब कुछ मिले । नित्य दिपकपूजा में ज्ञान प्रकाशमय सम्यग्ज्ञान की प्रार्थना करने से उसके सुसंस्कार जमा होते जाते है । इससे अज्ञानता टलती है और सम्यग्ज्ञान पाने का आदर होता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(६) अक्षत पूजा

शुद्ध अखंड अक्षत ग्रही, नन्दावर्त विशाल ।
पूरी प्रभु सन्मुख रहो, टाली सकल जंजाल ॥

छट्ठी अक्षत पूजा में ऐसी भावना करनी है कि, 'प्रभु ! जिस प्रकार अक्षत (चावल) बोने से नही उगते, उसमें अंकुर नही फूटते, उसी प्रकार अक्षतपूजा करते हुए मुझे भी ऐसी अक्षत जैसी स्थिति प्राप्त हो और मेरी आत्मा में अब जन्म का अंकुर न उगे । अथवा ऐसा चिन्तन भी किया जा सकता है कि, 'प्रभु ! अक्षत अर्थात् जिसमें क्षति न पहुँचे, जिसका क्षय न हो, वह अक्षतपूजा से मुझे अक्षयपद मिले ।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(७) नैवेद्य पूजा

अणाहारी पद में कर्या, विग्गह गइय अनन्त ।
दूर करी ते दीजिये, अणाहारी शिव सन्त ॥

सातवीं नैवद्यपूजा मे यह भावना करनी है कि, 'प्रभु ! नैवेद्य कीमती खाद्य वस्तु है। उस पर आपने निर्वेद (वैराग्य) रखा और वैराग्य का विषय बताया। मुझे भी नैवेद्य पूजा करते हुए मेवा, मिठाई आदि पर वैराग्य – अरूचि–नफरत जागे।' अथवा ऐसा चिन्तन किया जा सकता है कि, 'आपने नैवेद्य जैसे स्वादिष्ट खाद्य पर से भी आसक्ति उडा दी, राग मिटा दिया, तो सामान्य आहार पर तो राग (आसक्ति) रहेगी ही कैसे ? आपने अणाहारी पद प्राप्त किया, इसी तरह नैवेद्य पूजा करते हुए मेरा भी राग (आसक्ति) हटे और मैं अणाहारी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पद पाऊं । पर वस्तुरूप आहार के लिये मेहनत करके मैं थक गया हूं । ज्यों-ज्यों इस भावना के सुसंस्कार पैदा होंगे, त्यों-त्यों आहार संज्ञा और रस संज्ञा पर घृणा होती जाएगी ।

(८) फल पूजा

अष्ट कर्मदल चूरवा, आठमी पूजा सार ।
प्रभु आगल फल पूजतां, फल थी फल निर्धार ।।

आठवीं फलपूजा में यह भावना करनी है की, 'प्रभु ! फल बीज की अन्तिम पक्व अवस्था है । (बीज में से अंकुर, पत्ते, महोर आदि बीच की अवस्थायें है । फल के बाद आगे कुछ पैदा नहिं होने वाला, इसीलिये अन्तिम पक्व अवस्था है) इसी तरह मुझे भी मेरी आत्मा की अन्तिम पक्व अवस्था यानी परमात्म-दशा प्राप्त कराईये । इसके लिये मेरी सांसारिक पदार्थों की इच्छा की अवस्था को अन्तिम अवस्था बना दीजिये,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिससे कोई नयी इच्छा की अवस्था रहे ही नहीं ।' अथवा ऐसा चिन्तन किया जाय कि,'यह फल पूजा करते करते पूजा के फल के रुप में मुझे आपकी अधिकाधिक भक्ति मिले ।' प्रतिदिन ऐसी भावना किया करने से स्वात्मा की अन्तिम पक्व दशा रुप परमात्मा की अभिलाषा जगती है । फिर सहज में ही यह दशा प्राप्त करने के मार्ग की ओर प्रयाण होगा ।

जिन पूजा में नवांगी तिलक का रहस्य

श्री जिनेश्वर भगवान की भक्ति अष्टप्रकारी पूजा से होती है । उसमें दूसरी चन्दन पूजा में चन्दन से विलेपन करके केशर पूजा की जाती है, नौ अंगो पर तिलक किया जाता है । उसके पीछे विशिष्ट हेतु है । इस प्रत्येक तिलक पूजा में विशिष्ट भाव मिलाने से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह बाह्य पूजा धर्म अभ्यन्तर धर्म बन जाता है। अभ्यन्तर धर्म उपस्थित करेंगे, तभी धर्म का प्रभाव कार्यशील बनेगा।

(१) दायें-बायें अंगूठे पर तिलक

जल भरी संपुट पत्र मां, युगलिक नर पूजंत।
ऋषभ चरण-अंगूठडे, दायक भवजल अन्त॥

ऐसा माना जाता है कि शरीर के अंग के छोर से एक प्रकार का विद्युतीय प्रभाव बहता रहता है। इस हिसाब से हम प्रभु के चरण अंगूठे पर तिलक करते हुए अंगुली से छूते है, तब प्रभु में से परमात्मा के अंश का करंट हमारे अन्दर बहने लगता है। अंश अर्थात परमात्म स्वरूप की ओर द्रष्टि। इसीलिये तिलक करते हुए यह भावना रखनी है कि 'प्रभु ! आपके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्विकार परमात्म स्वरुप का करंट मुझ में आये । इन राग, द्वेष, तृष्णा आदि विकारों से मैं थक गया हूं, जो मुझे असत् प्रवृति कराते है । परंतु 'प्रभु ! अब आपके चरण स्पर्श से मेरे ये विकार शान्त हो जायें ।'

महापुरूष के चरणों में करस्पर्श, शिरस्पर्श–यह विनय है, नम्रता है । इसीलिये अंगूठे पर तिलक करते हुए अहोभाग्य मानना कि, "ओह ! मुझे मेरे तीर्थंकर भगवान जैसों के आगे नम्रता रखने को मिल रही है, उनका विनय करने का अवसर मिल रहा हे ।' नम्रता न जागी हो तो भी प्रभुचरणों में तिलक द्वारा करस्पर्श नम्रता का उत्तेजक है ; अत : ऐसी भावना रखना कि 'हे प्रभु ! मुझमें नम्रता आये, आपके आगे मेरा अहंत्व न रहे, मुझे सदा आपकी शरण हो ।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस रहस्य भरी भावना से नित्य अंगूठे पर तिलक किया जाय, तो इसके शुभ संस्कार से रागादि विकार दबाने का बल मिलता है।

(२) दायें–बायें घुटने पर तिलक

जानु बले काउस्सग्ग रह्या, विचर्या देश विदेश।
खडां खडां केवल लह्यां, पूजो जानु नरेश ॥

घुटने पर तिलक करते हुए ऐसा चिन्तन करना कि 'प्रभु ! चरित्र लेने के बाद केवलज्ञान न हुआ, तब बरसों तक आप घुटने मोडकर, पालथी लगाकर जमीन पर बैठे ही नहीं, किन्तु पाँवों पर खडे रहकर कायोत्सर्ग व ध्यान में रहे, उसी प्रकार मुझे भी इस तिलकपूजा से ऐसा बल मिले कि मैं भी सब कुछ वोसिराकर कायोत्सर्ग और ध्यान में मन लगाऊं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) दायें–बायें कांडे पर तिलक

लोकान्तिक वचने करी, वरस्या वरसीदान।
कर कांडे प्रभु पूजना, पूजो भवि बहुमान ॥

प्रभु के हाथ के कांडे पर तिलक करते हुए यह भावना रखनी है कि, 'प्रभु ! इन हाथों से आपने एक वर्ष तक रोज १ करोड आठ लाख सोना मुहर का दान दिया, तो मुझे भी यह दानरुचि और दानशक्ति मिले, जिससे मैं भी प्रतिदिन अपनी शक्ति अनुसार दान दे सकुँ । आपकी इस कर–पूजा के प्रभाव से मुझे दान देने का मन हुआ करे । मूर्च्छा का रोग मिटाने का यह एक ठोस उपाय है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(४) दायें–बायें कंधे पर तिलक

मान गयुं दोय अंश थी, देखी वीर्य अनन्त ।
भुजाबले भवजल तर्या, पूजो खंध महंत ॥

कंधे पर तिलक करते हुए ऐसी भावना रखनी है कि, 'प्रभु ! धन्य है आपको कि आपकी अनन्त शक्ति होने पर भी मामुली दुश्मन के सामने भी आपने अभिमान नहीं किया । मुझमें भी ऐसी वृत्ति हो कि कहीं भी मैं बिल्कुल अभिमान न करुं । गर्व–मद को खत्म करने का यह श्रेष्ठ उपाय है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५) मस्तक पर तिलक

सिद्ध शिला गुण उजली, लोकान्ते भगवंत।
वसिया तिणे कारण भवि, शिर शिखा पूजंत॥

प्रभु के मस्तक पर तिलक करते हुए ऐसी भावना रखनी चाहिये कि, 'प्रभु ! शरीर का सबसे उत्तम अंग जैसे मस्तक गिना जाता है, उसी प्रकार ब्रह्मांड में लोकाकाश लोकपुरूष के मस्तक रूप जो उंचा निर्मल भाग सिद्ध शिला है, वहाँ जाकर आपने शाश्वत बास किया है। आपके निर्मल भाग रुप मस्तक की पूजा के प्रभाव से मुझे भी सदा के लिये सिद्ध शिला पर वास मिले।' अथवा ऐसा चिन्तन भी किया जा सकता है कि ' आपके मस्तक में, दिमाग में और मन में अपार समाधि की स्वस्थता से निरवधि आनन्द है। आपके मस्तक की पूजा से मुझे भी ऐसी समाधि मिले।' मन की मस्ती का आनन्द लेने का यह अजोड उपाय है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(६) ललाट पर तिलक पूजा

तीर्थंकर पद पुण्य थी, त्रिभुवन जन सेवंत ।
त्रिभुवन तिलक समा प्रभु, भाल तिलक जयवंत ।।

प्रभु के ललाट पर तिलक करते हुए यह भावना रखनी कि 'प्रभु त्रिलोक के इन्द्र भी अपना मस्तक आपके चरणों में झुकाते है, अर्थात आप उनके शिरोधार्य हैं, मेरे भी शिरोधार्य बनें, तो मेरा अहोभाग्य । आपके ललाट में रही हुइ पूज्यता मुझमें सच्चा पूजकत्व (सेवकत्व) उत्पन्न करने वाला, बने, इस भावना से आपके ललाट पर तिलक करता हूँ । इससे मेरे ललाट पर आपकी आज्ञा का तिलक हो । अथवा आप त्रैलोक्य लक्ष्मी के ललाट पर तिलकभूत हैं । मेरे अहोभाग्य कि आपके ललाट पर मुझे तिलक करने को मिलता है । आज्ञा पालन करने में शूरवीरता प्रकट करने का यह अद्वितीय उपाय है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(७) कंठ पर तिलक पूजा

सोल पहर प्रभु देशना, कंठे विवर वर्तूल ।
मधुर ध्वनि सुर नर सुणे,तिणे गले तिलक अमूल ॥

प्रभु के कंठ पर तिलक करते हुए यह भावना करनी है कि 'प्रभु ! आपने तो इस कंठ से तत्व की वाणी वरसाने का अनुपम और अतिभव्य उपकार किया । इस कंठ की पूजा करते हुए मुझे इस उपकारी प्रवृति की खूब अनुमोदना हो । मुझमें भी परोपकार वृत्ति आये ।' अथवा ऐसी भावना हो कि, 'आपके कंठ से निकलती हुई वाणी में अपार करुणा है, तो मुझे भी ऐसा कंठ मिले कि जिससे निकलती हुई वाणी में करुणा बरसती हो । कठोरता का नाश करके कोमलता खिलाने का यह सुन्दर उपाय है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(८) हृदय पर तिलक पूजा

हृदय कमल उपशम बले,बाल्या राग ने रोष ।
हिम दहेवनखंड ने हृदय तिलक संतोष ॥

प्रभु ! आपके हृदय पर तिलक करता हूँ, क्योंकि आपने इस हृदयकमल में समस्त राग–द्वेष जला डाले हैं और उसमें उपशम का सौन्दर्य और कैवल्य लक्ष्मी बसा दी है । इस तिलक पूजा से प्रभु ! मुझे भी उपशम का सौन्दर्य और ज्ञान–लक्ष्मी मिले । हृदय की उद्विग्नता दूर करने व समभाव हस्तगत करने का यह अजोड उपाय है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(९) नाभि पर तिलक पूजा

रत्नत्रयी गुण उजली, सकल सुगुण विश्राम ।
नाभि–कमलनी पूजना, करतां अविचल धाम ॥

'प्रभु ! आपके नाभि कमल पर तिलक करते हुए इतना मांगता हूं कि, 'जैसे नाभि शरीर के मध्य में है, उसी प्रकार आत्मा के मध्य में आठ उज्ज्वल रुचक प्रदेश हैं । उनमें आत्मा के उज्ज्वल ज्ञान, दर्शन और चारित्र है । उन्हें विकसित करके आपने आत्मप्रदेशों में प्रकट कर लिया । इसी तरह नाभिकमल पर तिलक से मेरी आत्मा के रुचक प्रदेश में रहे हुए ज्ञान दर्शन चारित्र समस्त आत्मप्रदेशो में प्रकट हों । मिथ्यात्व के अन्धकार को दूर करके सम्यक्त्व का तेज प्रगटाने के लिये यह भव्य उपाय है ।

पूर्व बताये गये अष्टप्रकारी पूजा और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ये नवांगी तिलक पूजा के रहस्य समझकर तथा उन्हे दृष्टि पथ में रखकर पूजा व तिलक करने से पूजा चैतन्यवंती बनती है। हृदय में अनोखे शुभ अध्यवसाय जागते हैं, हृदय परिवर्तित होता है, तत्वचिन्तन को अवकाश मिलता है।

इन रहस्यों का बार-बार चिन्तन-मनन करने से उन-उन अंगो की पूजा करते वक्त मन में शीघ्र ही सुन्दर भावों के करने बहेंगे, जिनका आनन्द अपूर्व होगा।

परमात्मा का भावमय चिन्तन भव्य भावना :

प्रभु के दर्शन करते वक्त अथवा अन्त में मंदिरजी से निकलने से पहले प्रभु के सामने स्थिर दृष्टि रखकर निम्नलिखित भावना करके हृदय को प्रभु भक्ति से आर्द्र बनाईये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हे वीतराग ! अनन्त पुण्य के उदय से आज आपका पुण्य दर्शन पाकर मेरा जीवन धन्य बना है, मेरी अन्तरात्मा उल्लसित बनी है । मुझे लगता है कि मेरे दरिद्रता, दुर्भाग्य व जन्म जन्मान्तर के पाप नष्ट हो गये हैं, नहिं तो मुझे आपके दर्शन मिलते ही कहां से ?

सचमुच आपकी वीतराग मुद्रा मेरी आत्मा को मोहनिद्रा से जागृत करनेवाली है । हे नाथ ! आपके दर्शन–वन्दन–पूजन करके एसा द्रढ संकल्प करता हूं कि आपके धर्मोपदेश का श्रवण करके मेरी आत्मा में शुभ संस्कारो की योग्यता प्रकट करूंगा ।

अहो ! परमात्मा की मुखमुद्रा कैसी शान्त और मनोहर है ! जिस मुख से कभी किसीकी निन्दा, चुगली आदि पाप नहीं हुए हैं, जिसमें रही हुई जीभ को कभी रस लालसा का पोषण नहीं मिला है, जिस मुख

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में से अनेक भव्यात्माओं का उद्धार करने वाली पैंतीस गुणों से भरी हुई वाणी प्रकट हुई। इससे अनेक जीवों के संदेह दूर हुए, धर्म श्रद्धा प्रगटायी।

हे जिनेन्द्र। आपकी नासिका कैसी। जिससे सुगंध या दुर्गन्ध के प्रति राग–द्वेष के मलीन भावों का स्पर्श नही हुआ है। हे देव ! आपकी कमल की पंखुडी जैसी आंखे कितनी निर्मल और निर्विकार हैं। इनमें से शान्त रस का अमृत झर रहा है, कृपारस बरस रहा है, इनमें गजब की आत्ममस्ती की झांकी दिख रही है। इन आंखो का उपयोग उपसर्ग करनेवाले के प्रति द्वेष या भक्ति करनेवाले के प्रति राग का पोषण करने में नही हुआ है। ओ जिनराज ! आपके इस नेत्र–युगल में निष्कारण करुणा, भाव दया, विश्वमैत्री, अपकारी के प्रति भी उपकार करने की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावना का दिव्य तेज चमक रहा है ।

हे देवाधिदेव ! आपके दो कान भी कैसे निर्दोष हैं ? इनसे किसीके भी झूठे दोषों का श्रवण करके ईर्ष्या–वर्धक पाशवी वृत्तियों का पोषण नहिं हुआ है । रागादि विकार पूर्वक व कुसंस्कारों को भडकाने वाले शब्दों का श्रवण इनसे नही हुआ है । विवेक के सहारे अशुभ संस्कारो का नाश करके आपने श्रवण शक्ति का महान सदुपयोग किया है ।

परमात्मन् । आपके इस पुण्य देह से हिंसादि किसी पाप का सेवन नही हुआ है । इस शरीर के द्वारा गाँव–गावँ विचरकर आपने अनेक जीवों के संसार–बंधन तुडाये । सर्व कर्म का क्षय करके आपने केवलज्ञान और केवल दर्शन गुण प्रगटाये ।

हे करुणा समुद्र । आपका दर्शन चन्द्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की तरह पाप के ताप का शमन करता है। सूर्य की तरह अज्ञान तिमिर को हटाता है, मेघ की तरह संसार के दावानल को शान्त करता है, अग्नि की तरह कर्मकाष्ठ को जलाकर भस्म करता है, हवा की तरह कर्म–रज को उडा देता है, दर्पण की तरह आत्म स्वरुप बताता है, औषधि की तरह कर्म रोग को दूर करता है, चक्षु की तरह सन्मार्ग दिखाता है, चिंतामणि रत्न की तरह सर्व मनोवांछित पूर्ण करता है, अमृत की तरह भाव रोग का निवारण करता है, जहाज की तरह भवसागर से पार उतारता है, चन्दन की तरह गुण–सुवास को प्रकट करता है।

इस प्रकार प्रभु के अनेक गुणों का चिन्तन करने से मन की प्रसन्नता की वृद्धि होती है, जिसका आनन्द अवर्णनीय है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिन नाम के कीर्तन की महिमा व फल

तीर्थंकरो के पवित्र व मंगल नाम का जाप व कीर्तन कितनी महिमावाला ओर फलदायी है, उसका वर्णन करते हुए महापुरुष फरमाते हैं कि, तीर्थंकरो के नाम का कीर्तन करने से :–

(१) करोडों तप का फल मिलता है

(२) सर्व कामनायें सिद्ध होती है,

(३) जिह्वा व जन्म सफल बनता है,

(४) कष्ट और विघ्न टलते हैं,

(५) मंगल और कल्याण की परंपरा प्राप्त होती है,

(६) महिमा व महत्ता बढती है ।

(७) प्रत्येक समय में विजय, सुयश

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और महोदय होता है ।

(८) दुर्जनों द्वारा बुरा सोचा हुआ निष्फल जाता है ।

(९) यश, कीर्ति और बहुमान बढता है ।

(१०) आनन्द, विलास, सुख, लीला और लक्ष्मी मिलते हैं ।

(११) भव जल तरण, शिवसुख मिलन और आत्मोद्धार करण सुलभ होता है ।

(१२) दुर्गति के द्वारों का रोध और सद्गति के द्वार का उद्घाटन होता है।

इसी कारण से तीर्थंकरो का नाम परम निधान है, अमृत का कुप्पा है, जन-मन मोहन वेल है, रात-दिन याद करने योग्य है, प्रभु-नाम एक घडी भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न भूलने लायक है, तीर्थंकरो का नाम (घर बैठे गंगा जैसा) आलस में मिली हुई गंगा है। मोर के मन को जैसे मेघ, चकोर के मन जैसे चन्द्र, भ्रमर के मन जैसे कमल, कोयल के मन जैसे आम, ज्ञानी के मन जैसे तत्व चिन्तन और योगी के मन जैसे संयम धारण, दानी के मन जैसे दान और न्यायी के मन जैसे न्याय सीता के मन जैसे राम और रति के मन जैसे काम, व्यापारी के मन जैसे दाम और पंथी के मन जैसे धाम, उसी तरह तत्व गुण रसिक जीव के मन को तीर्थंकर का नाम आनन्द देनेवाला है। तीर्थंकर के नाम को जपने वाले को नवनिधान घर में है, कल्प वेली आंगन में है, आठ महासिद्धि घट में है। तीर्थंकरों के पवित्र नाम ग्रहण से किसी भी प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के काया के कष्ट के बिना ही भव जल तिरा जा सकता है । तीर्थंकरों के लोकोत्तर नाम कीर्तन रुपी अमृतपान से मिथ्यामति रुपी विष तत्काल नाश पाता है तथा अजरामर पद की प्राप्ति हस्तामलकवत् बन जाती है, नाम जप से मन का रक्षण होता है, दुर्ध्यान अटकता है । बुरे विचार–आकुलता दूर होती है, चंचल मन स्थिर–पवित्र बनता है, अतः प्रतिदिन नियमित जाप का अभ्यास डालिये ।

'ॐ ह्रीं अर्हं नमः', 'नमो जिणाणं जिअभयाणं'

* * *

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री अरिहंत प्रभु की अवस्था त्रिक का चिन्तन

देवाधिदेव की पूजा करने के बाद गभारे से बाहर आकर प्रभु की पिंडस्थ– पदस्थ और रुपातीत इन तीन अवस्थाओं का चिन्तन करना है। पिंड=देह। प्रभु ने देह में रहकर कौन–कौन से गुण साधे, कौन–कौन सी साधना की, इसका विचार है **पिंडस्थ अवस्था का चिन्तन** उसमें जन्म अवस्था, राज्य अवस्था और श्रमण अवस्था इन तीनों का विचार करना है।

(१) जन्म अवस्था : हे मेरे नाथ ! आप कैसे तीर्थंकर नाम कर्म आदि उत्कृष्ट पुण्य का समूह लेकर आये कि आपका जन्म होते ही तीनों जगत में प्रकाश फैल जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नारक के जीवों को क्षणभर आनन्द हो जाता है, ५६ दिक्कुमारी और ६४ इन्द्रों के सिंहासन डोलने लगते हैं। अवधिज्ञान से आपका जन्म हुआ जानकर वे हर्ष से पागल बन जाते हैं।

विनय-बहुमान पूर्वक अपना भक्ति-कर्तव्य करते हैं। ६४ इन्द्रों द्वारा १ करोड ६० लाख अभिषेक उल्लासपूर्ण हृदय से बहुमान पूर्वक किये जाते हैं। इतने उंचे सन्मान मिलने पर भी आपको अंशमात्र भी अभिमान नहीं होता ? कितने निरभिमानता और वैराग्य दशा ! प्रभु मुझे भी यह मिले।

(२) **राज्य अवस्था :-** इसमें यह चिन्तन करना है कि हे नाथ ! महान पुण्य के उदय से आपको राजऋद्धि-एश्वर्य-सत्ता-संपति मिली, फिर भी तनिक भी आसक्ति न रखी, निर्लेप रहे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रजा का कल्याण साधा, विषय–विलास में उदासीन बनकर आत्मा की गुणऋद्धि को सच्ची समृद्धि मानी । संसार की नश्वरऋद्धि को महत्व नही दिया । प्रभु ! धन्य है आपकी अनासक्ति ! धन्य है आपकी कल्याणकारिता ! प्रभु की इस सर्वत्र परहितकारिता की विरासत लेने जैसी है ।

(३) श्रमण अवस्था :– 'अहो प्रभु ! आपने वर्ष भर में ३ अरब ८८ करोड सोना मुहरों का दान देकर चारित्र लिया । केवलज्ञान पाने तक आप सदा काउस्सग्ग ध्यान में रहे । सुख हो या दुःख, शत्रु हो या मित्र, मान हो या अपमान, सबमें आपने समभाव रखा । बाह्य–अभ्यन्तर तप द्वारा आपने विपुल कर्म–निर्जरा की । घन घाती कर्म का क्षय किया । आपके वार्षिक दान का विचार करके मुझे धन की मूर्च्छा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उतारने का अभ्यास, कष्ट में अनोखी सहिष्णुता और समभाव का आदर्श और आत्मशुद्धि कर तप में वीर्यशक्ति खोलने का सामर्थ्य मिले, जिससे मुझे विरतिधर्म सुलभ बने।'

पदस्थ अवस्था :- अर्थात तीर्थंकर पद ' अष्ट प्रातिहार्य, ३४ अतिशय, ३५ गुणयुक्त वाणी से होनेवाला उपकार आदि का चिन्तन करना। 'प्रभु ! आपके सिवाय तीर्थंकर नाम कर्म भी कहीं देखने को नहीं मिलेगा। तीर्थ की चतुर्विध संघ की स्थापना करके भव्य जीवों को मोक्ष मार्ग की ओर प्रयाण करने के लिये आपने अजोड स्याद्वादमय तत्त्व प्रकाश दिया। हे सर्वज्ञ प्रभु आपके समवसरण में जन्मजात वैरी पशु व मानव वैर रहित बन जाते। आपकी उपशम रस भरी वाणी से मोह और कषायों को जीतने का प्रकाश प्राप्त करते। अनादि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के मोह–मिथ्यात्व के अन्धकार को दूर करने वाली प्रभु की कैसी अजोड धर्म–देशना । अनेक जीवों को राग–द्वेष के बन्धन में से मुक्त किया और मुक्त बनने की तत्त्वमार्ग की विरासत देते गये ।'

(३) रुपातीत अवस्था :– 'आप कर्म पूर्ण होने पर कर्मरहित, देहरहित शुद्ध अवस्था = मोक्ष स्वरुप निश्चल अवस्था आपने पायी । प्रभु ! आपकी कैसी अनुपम रुपातीत देह व कर्म बिना की अरुपी अवस्था । कोई पीडा–गुलामी, भूख, प्यास, रोग–शोक, जन्म–मरण आदि विषमताकारी कोई द्वंद्व आपको भोगने शेष ही नहीं रहे हैं ।

आप तो सर्वथा स्वाधीन, सर्वतंत्र स्वतंत्र, अनन्तज्ञान – अनन्त सुखमय स्वभाव रमणता के स्वामी बने हैं । आदि अनंत भाग में अक्षय स्थिति पायी । प्रभु ! मैं भी सम्यक्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चारित्र के पुरुषार्थ से मिथ्यात्व अविरति–कषायों को जीतकर अयोगी बनुं, यही एक तमन्ना है।

इस प्रकार तीन अवस्थाओं के चिन्तन से आत्मा के परिणाम सुन्दर बनते हैं, जिनसे सम्यग् दर्शनादि गुण सुलभ बनते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री अरिहंत भगवंतो की पूजा

पाप का लोप करती है।

दुर्गति का दलन करती है।

आपत्ति का नाश करती है।

पूण्य को इकट्ठा करती है।

लक्ष्मी को बढाती है।

आरोग्य को पुष्ट करती है।

प्रसन्नता खिलाती है।

यश उत्पन्न करती है।

स्वर्ग देती है।

और

अन्त में

मोक्ष की प्राप्ति कराती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हमारे अन्य प्रकाशन

	Rs.
शास्त्र वार्ता समुच्चय स्तबक १ से ११ (७ किताब)	३००-००
ध्यानशतक विवेचन	७-००
गणधरबाद	३-००
कल्याणमित्र मदनरेखा	४-००
ललितविस्तरा	१२-००
प्रतिक्रमण सूत्र चित्र आलबम	२०-००
कदम आगे बढायेजा	५-००
आत्म सौदयँ	५-००
जैन धर्मका परिचय	२०-००

प्राप्ति स्थान

दिव्य दर्शन ट्रस्ट

कुमारपाल वि. शाह
३६, कलिकुंड सोसायटी,
धोलका, जि. अहमदाबाद.
फोन : 296
Pin : 387810.

भरतकुमार चतुरभाई शाह
कालुशीनी पोल,
कालूपुर,
अहमदाबाद - 380 001.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org